दसवाँ पाठ

बस की सैर

एक थी लड़की। नाम था उसका वल्ली अम्माई। आठ बरस की थी। उसे अपने घर के दरवाजे पर खड़े होकर सड़क की रौनक देखना बड़ा अच्छा लगता था।

वल्ली अम्माई को अपना नाम भी बड़ा अच्छा लगता था। वैसे, दुनिया में ऐसा कौन होगा जिसे अपना नाम पसंद न हो?

सड़क पर वल्ली अम्माई की उम्र का कोई साथी नहीं था। अपनी दहलीज पर खड़े रहने के अलावा वह कर भी क्या सकती थी? और फिर उसकी माँ ने उसे सख्त ताकीद कर रखी थी कि वह खेलने के लिए अपनी सड़क छोड़कर दूसरी सड़क पर न जाए।

सड़क पर सबसे ज्यादा आकर्षित करनेवाली वस्तु, कस्बे की बस थी जो हर घंटे उधर से गुजरती थी। एक दफा जाते हुए और एक दफा, लौटते हुए। हर बार नयी-नयी सवारियों से लदी
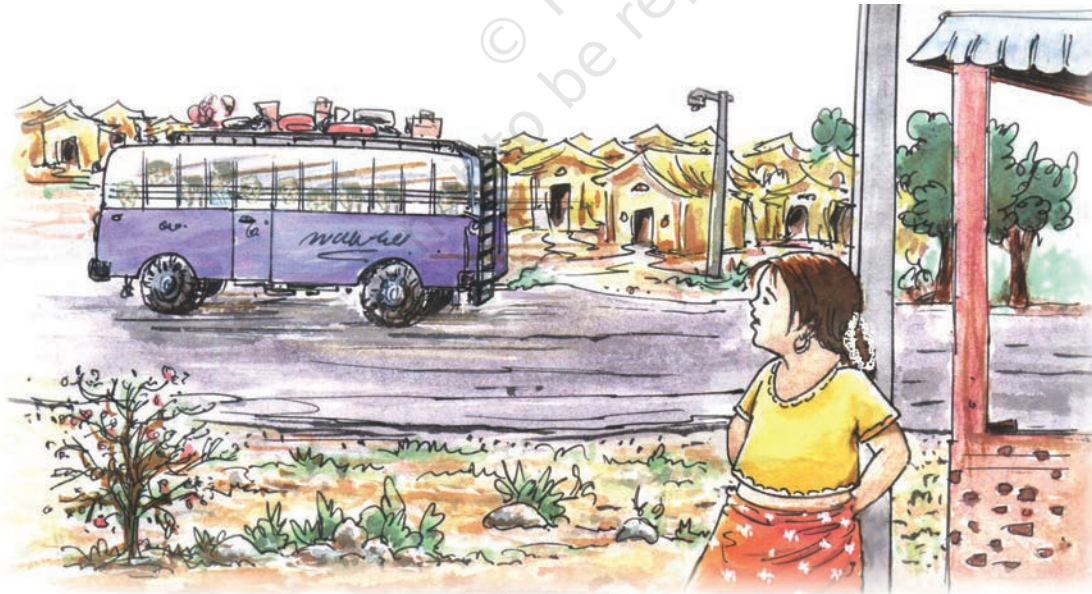
हुई बस का देखना, वल्ली अम्माई की कभी न खत्म होने वाली खुशी का खजाना था।

हर रोज़ वह बस को देखती। और एक दिन एक नन्हीं सी इच्छा उसके नन्हे से दिमाग में घुस कर बैठ गई। कम से कम एक बार तो वह बस की सैर करेगी ही। नन्हीं-सी इच्छा, बड़ी और बड़ी

होती चली गई। वल्ली बड़ी हसरत से उन लोगों की तरफ़ देखती जो सड़क के नुक्कड़ पर बस से उतरते-चढ़ते, जहाँ पर बस आकर रुकती थी। उनके चेहरे इसके दिल में सौ-सौ इच्छाएँ, सपने और आशाएँ जगा जाते। उसकी कोई सखी-सहेली जब उसे अपनी बस-यात्रा का किस्सा सुनाती, शहर के किसी दृश्य का हाल बताकर डींग हाँकती, तो वल्ली जल-भुन जाती "घमंडी...घमंडी" वह चिल्लाती। चाहे वल्ली और उसकी सहेलियों को इस शब्द का अर्थ मालूम नहीं था, फिर भी इसका बेधड़क इस्तेमाल करतीं।

दिनों-दिन, महीनों-महीने वल्ली ने बस-यात्रा से संबंधित छोटी-मोटी जानकारी गाँव से कभी-कभार शहर जानेवालों और बस में प्राय: सफ़र करते रहने वाले यात्रियों की आपसी बातचीत से प्राप्त कर ली थी। उसने आप भी कुछ लोगों से इस बारे में सवाल पूछे थे।

शहर उसके गाँव से कोई दस किलोमीटर दूर था। एक ओर का भाड़ा था तीस पैसे। इसका मतलब, जाने और लौटने—दोनों ओर के साठ पैसे। शहर तक पहुँचने में बस को पौन घंटा लगता था। शहर पहुँचकर, अगर वह बस में ही बैठी रहे और तीस पैसे और चुका दे तो उसी बस में बैठी-बैठी वापस भी आ सकती है। यानी अगर वह गाँव से दोपहर एक बजे चल दे तो पौने दो बजे शहर पहुँच जाएगी। और फिर उसी बस से वह अपने गाँव कोई तीन बजे लौट आएगी।

इसी प्रकार वह हिसाब पर हिसाब लगाती रही, योजना पर योजना बनाती रही।

एक दिन की बात है, जब यह बस गाँव की सीमा पार करके बड़ी सड़क पर प्रवेश कर रही थी, एक नन्हीं-सी आवाज़ पुकारती हुई सुनाई दी, "बस को रोको...बस को रोको।" एक नन्हा-सा हाथ हिल रहा था।

बस धीमी हो गई। कंडक्टर ने बाहर झाँका और कुछ तुनककर कहा, "अरे भई! कौन चढ़ना चाहता है? उनसे कहो कि जल्दी करें... सुना तुमने?"

"बस...मैं इतना जानती हूँ कि मुझे शहर जाना है...और यह रहा तुम्हारा किराया," उसने रेज़गारी दिखाते हुए कहा।

"ठीक! ठीक! पहले बस में चढ़ो तो!" कंडक्टर ने कहा और फिर उसे धीरे से उठाकर बस में चढ़ा लिया।

"च च च...मैं अपने आप चढ़ूँगी...तुम मुझे उठाते क्यों हो?"

कंडक्टर बड़ा हँसोड़ था। "अरी मेम साहिब! नाराज क्यों होती हो?...बैठो...इधर पधारो..." उसने कहा।

"रास्ता दो भई रास्ता...मेम साहिब तशरीफ़ ला रही हैं।"

दोपहर के उस समय आने-जाने वालों की भीड़-भाड़ घट जाती थी। पूरी बस में कुल छह-सात सवारियाँ बैठी हुई थीं।
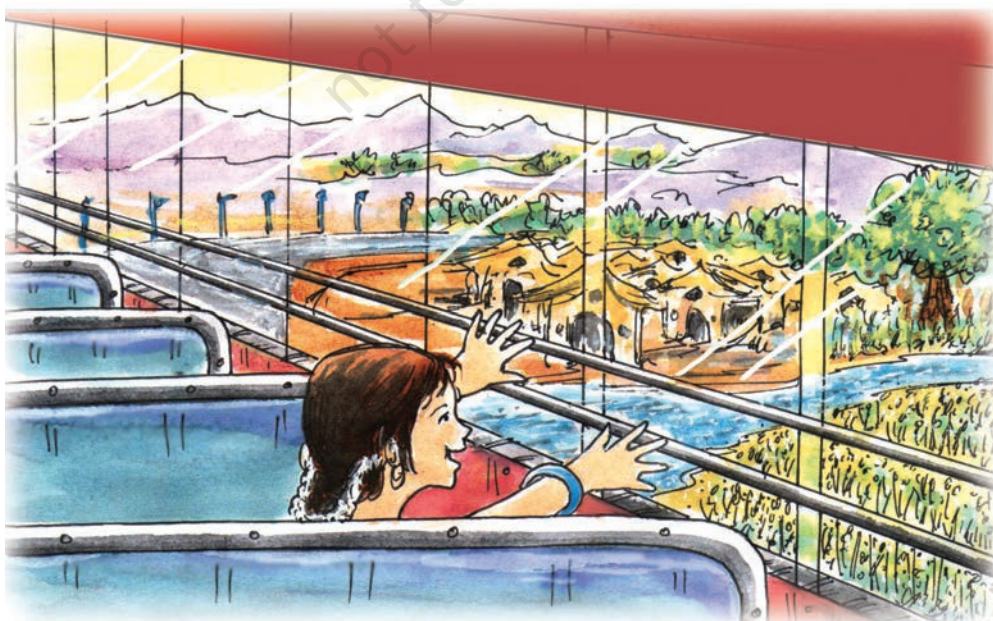
सभी मुसाफिरों की नज़र वल्ली पर थी और वे सब कंडक्टर की बातों पर हँस रहे थे।

वल्ली मन ही मन झेंप गई। आँखें फेर कर वह जल्दी से एक खाली सीट पर जा बैठी।

"गाड़ी चलाएँ? बेगम साहिबा।" कंडक्टर ने मुसकराकर पूछा। उसने दो बार सीटी बजाई। बस गरजती हुई आगे को बढ़ी।

वल्ली सब कुछ आँखें फाड़कर देख रही थी। खिड़कियों से बाहर लटक रहे परदे के कारण उसे बाहर का दृश्य देखने में बाधा पड़ रही थी। वह अपनी सीट पर खड़ी हो गई और बाहर झाँकने लगी।

इस समय बस एक नहर के किनारे-किनारे जा रही थी। रास्ता बहुत ही तंग था। एक ओर नहर थी और उसके पार ताड़ के वृक्ष, घास के मैदान, सुदूर पहाड़ियाँ और नीला आकाश! दूसरी ओर एक गहरी खाई थी, जिसके परे दूर-दूर तक फैले हुए हरे-भरे खेत! जहाँ तक नज़र जाती, हरियाली ही हरियाली!

अहा! यह सब कुछ कितना अद्‌भुत था! अचानक एक आवाज़ आई और वह चौंक गई। 'सुनो बच्ची!' वह आवाज़ कह रही थी, "इस तरह खड़ी मत रहो, बैठ जाओ!"

वल्ली बैठ गई और उसने देखा कि वह कौन था? वह एक बड़ी उम्र का आदमी था, जिसने उसी के भले के लिए यह कहा था। लेकिन उसके इन शब्दों से वह चिढ़ गई।

"यहाँ कोई बच्ची नहीं है", उसने कहा, "मैंने पूरा भाड़ा दिया है।"

कंडक्टर ने भी बीच में पड़ते हुए कहा, "जी हाँ, यह बड़ी बेगम साहिबा हैं। क्या कोई बच्चा अपना किराया अपने आप देकर शहर जा सकता है?"

वल्ली ने आँखें तरेरकर उसकी ओर देखा। "मैं बेगम साहिबा नहीं हूँ, समझे!... और हाँ, तुमने अभी तक मुझे टिकट नहीं दिया है।"

"अरे हाँ!" कंडक्टर ने उसी के लहजे की नकल करते हुए कहा, और सब हँसने लगे। इस हँसी में वल्ली भी शामिल थी।

कंडक्टर ने एक टिकट फाड़ा और उसे देते हुए कहा, "आराम से बैठो! सीट के पैसे देने के बाद कोई खड़ा क्यों रहे?"

"मुझे यह अच्छा लगता है", वह बोली।

"खड़ी रहोगी तो गिर जाओगी, चोट खा जाओगी—गाड़ी जब एकदम मोड़ काटेगी ...या झटका लगेगा। तभी मैंने तुम्हें बैठने को कहा है, बच्ची!"

"मैं बच्ची नहीं हूँ, तुम्हें बता दिया न!" उसने कुढ़कर कहा, "मैं आठ साल की हूँ।"

"क्यों नहीं...क्यों नहीं! मैं भी कैसा बुद्धू हूँ! आठ साल! बाप रे!"

बस रुकी। कुछ नए मुसाफ़िर बस में चढ़े और कंडक्टर कुछ देर के लिए व्यस्त हो गया। वल्ली बैठ गई। उसे डर था कि कहीं उसकी सीट ही न चली जाए! एक बड़ी उम्र की औरत आई और उसके पास बैठ गई।

"अकेली जा रही हो, बिटिया?" जैसे ही बस चली, उसने वल्ली से पूछा।

"हाँ, मैं अकेली जा रही हूँ। मेरे पास मेरा टिकट है।" उसने अकड़ कर तीखा जवाब दिया।

"हाँ...हाँ, शहर जा रही हैं...तीस पैसे का टिकट लेकर" कंडक्टर ने सफाई दी।

"आप अपना काम कीजिए, जी!" वल्ली ने टोका, लेकिन उसकी अपनी हँसी भी छूट रही थी।

कंडक्टर भी खिल-खिलाकर हँसने लगा।

"इतनी छोटी बच्ची के लिए घर से अकेले निकलना क्या उचित है?" बुढ़िया की बक-झक जारी थी। "तुम जानती हो, शहर में तुम्हें कहाँ जाना है? किस गली में? किस घर में?"

"आप मेरी चिंता न करें। मुझे सब मालूम है," वल्ली ने पीठ मोड़, मुँह खिड़की की ओर करके बाहर झाँकते हुए कहा।

यह उसकी पहली यात्रा थी। इस सफ़र के लिए उसने सचमुच कितनी सावधानी और कठिनाई से योजना बनाई थी। इसके लिए उसे छोटी-छोटी जो रेज़गारी भी हाथ लगी, इकट्ठी करनी पड़ी–उसे अपनी कितनी ही इच्छाओं को दबाना पड़ा...जैसे कि वह मीठी गोलियाँ नहीं खरीदेगी...खिलौने, गुब्बारे...कुछ भी नहीं लेगी। कितना बड़ा संयम था यह! और फिर विशेष रूप से उस दिन, जब जेब में पैसे होते हुए भी, गाँव के मेले में गोल-गोल घूमने वाले झूले पर बैठने को उसका कितना जी चाह रहा था।

पैसों की समस्या हल हो जाने पर, उसकी दूसरी समस्या यह थी कि वह माँ को बताए बिना घर से कैसे खिसके? लेकिन इस बात का हल भी कोई बड़ी कठिनाई पैदा किए बिना ही निकल आया। हर रोज़, दोपहर के खाने के बाद, उसकी माँ कोई एक बजे से चार-साढ़े चार बजे तक सोया करती थी। वल्ली का, बीच का यह समय गाँव के अंदर सैर-सपाटे करने में बीतता था। लेकिन आज वह यह समय गाँव से बाहर की सैर में लगा रही थी।

बस चली जा रही थी–कभी खुले मैदान में से, कभी किसी गाँव को पीछे छोड़ते हुए और कभी किसी ढाबे को। कभी यह लगता कि वह सामने से आ रही किसी दूसरी गाड़ी को निगल जाएगी या फिर किसी पैदल यात्री को।...लेकिन यह क्या? वह तो उन सबको, दूर पीछे छोड़ती हुई बड़ी सावधानी-सफाई से आगे निकल गई। पेड़ दौड़ते हुए उसकी ओर आते दिखाई दे रहे थे... लेकिन बस रुकने पर वे स्थिर हो जाते और चुपचाप–बेबस से खड़े रहते।

अचानक खुशी के मारे वल्ली तालियाँ पीटने लगी। गाय की एक बछिया अपनी दुम ऊपर उठाए सड़क के बीचों-बीच बस के ठीक सामने दौड़ रही थी। ड्राइवर जितनी ज़ोर से भोंपू बजाता, उतना ही ज़्यादा वह डर कर बेतहाशा भागने लगती।

वल्ली को यह दृश्य बहुत ही मज़ेदार लगा और वह इतना हँसी, इतना हँसी कि उसकी आँखों में आँसू आ गए।

"बस...बस बेगम साहिबा!" कंडक्टर ने कहा, "कुछ हँसी कल के लिए रहने दो।"

आखिर बछिया एक ओर निकल गई। और फिर बस रेल के फाटक तक जा पहुँची। दूर से

रेलगाड़ी एक बिंदु के समान लग रही थी। पास आने पर वह बड़ी और बड़ी होती चली गई। जब वह फाटक के पास से धड़धड़ाती-दनदनाती हुई निकली तो बस हिलने लगी। फिर बस आगे बढ़ी और रेलवे-स्टेशन तक जा पहुँची। वहाँ से वह भीड़-भड़क्के वाली एक सड़क से गुजरी, जहाँ दोनों ओर दुकानों की कतारें थी। फिर मुड़कर वह एक और बड़ी सड़क पर पहुँची। इतनी बड़ी-बड़ी सजी हुई दुकानें, उनमें एक से एक बढ़कर चमकीले कपड़े और दूसरी चीज़ें। भीड़ की रेलम-पेल। वल्ली हैरान, भौंचक्की-सी, हर चीज़ को आँखें फाड़े देख रही थी।

बस रुकी, और सभी यात्री उतर गए।

"ए बेगम साहिबा! आप नहीं उतरेंगी क्या? तीस पैसे की टिकट खत्म हो गई।" कंडक्टर ने कहा।

"मैं इसी बस से वापस जा रही हूँ", उसने अपनी जेब में से तीस पैसे और निकालकर रेज़गारी कंडक्टर को देते हुए कहा।
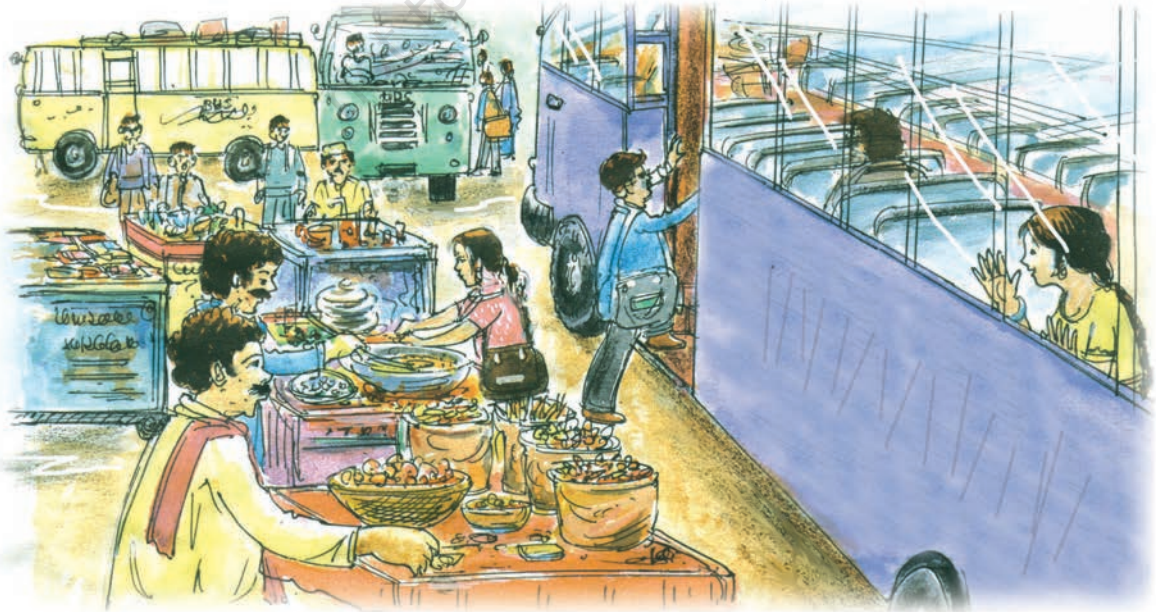
"क्या बात है?"

"कुछ नहीं, मेरा बस में चढ़ने को जी चाहा...बस!"

"तुम शहर देखना नहीं चाहती?"

"अकेली? न बाबा न। मुझे डर लगता है।" उसने कहा। उसके हाव-भाव पर कंडक्टर को बड़ा मज़ा आ रहा था।

"लेकिन तुम्हें बस में आते हुए डर नहीं लगा?" उसने पूछा।

"इसमें डर की क्या बात है?" वल्ली ने जवाब दिया।

"अच्छा तो उतर कर...उस जलपान-गृह में हो आओ...कॉफी पी लो...इसमें डर की क्या बात है?"

"ऊँ हूँ...मैं नहीं पिऊँगी।"

"अच्छा तो क्या मैं तुम्हारे लिए कुछ पकौड़े या चबैना लाऊँ?"

"नहीं, मेरे पास इनके लिए पैसे नहीं हैं...मुझे बस एक टिकट दे दो।"

"जल-पान के लिए तुम्हें पैसे की ज़रूरत नहीं। पैसे मैं दूँगा।"

"मैंने कह दिया न नहीं..." उसने दृढ़तापूर्वक कहा।

नियत समय पर बस फिर चल पड़ी। लौटती बार भी कोई खास भीड़ नहीं थी।

एक बार फिर वही दृश्य! लेकिन वह ज़रा भी नहीं ऊबी! हर दृश्य में उसे पहले जैसा मज़ा आ रहा था।

लेकिन अचानक–

ओह देखो...वह बछिया...सड़क पर मरी पड़ी थी। किसी गाड़ी के नीचे आ गई थी।

ओह! कुछ क्षण पहले जो एक प्यारा, सुंदर जीव था, अब अचानक अपनी सुंदरता और सजीवता खो रहा था। अब वह कितना डरावना लग रहा था।...फैली हुई टाँगें, पथराई हुई आँखें, खून से लथपथ...
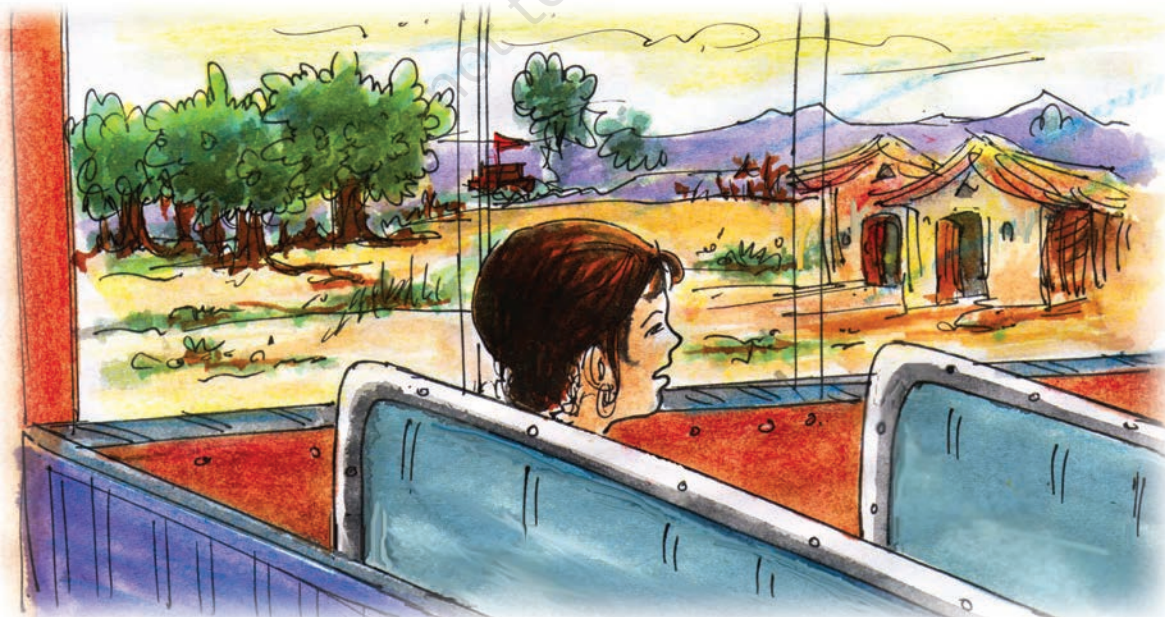
ओह! कितने दुख की बात!

"यह वही बछिया है न जो बस के आगे-आगे भाग रही थी...जब हम आ रहे थे?" वल्ली ने कंडक्टर से पूछा।

कंडक्टर ने सिर हिला दिया। बस चली जा रही थी। बछिया का ख्याल उसे सता रहा था। उसका उत्साह ढीला पड़ गया था। अब खिड़की से बाहर झाँककर और दृश्य देखने की उसकी इच्छा नहीं रही थी। वह अपनी सीट पर जमी बैठी रही।

बस तीन बजकर चालीस मिनट पर उसके गाँव पहुँची। वल्ली खड़ी हुई। उसने जम्हाई लेकर कमर सीधी की और कंडक्टर को विदा कहते हुए बोली, "अच्छा, फिर मिलेंगे, जनाब!"

–वल्ली कानन

(अनुवाद–बालकराम नागर)

अभ्यास

शब्दार्थ

ताकीद – निर्देश भाड़ा – किराया मुसाफ़िर – यात्री

1. कहानी से

(क) शहर की ओर जाते हुए वल्ली ने बस की खिड़की से बाहर क्या-क्या देखा?
"अब तो उसकी खिड़की से बाहर देखने की इच्छा भी खत्म हो गई थी।"

(ख) वापसी में वल्ली ने खिड़की के बाहर देखना बंद क्यों कर दिया?

(ग) वल्ली ने बस के टिकट के लिए पैसों का प्रबंध कैसे किया?

2. क्या होता अगर

(क) वल्ली की माँ जाग जाती और वल्ली को घर पर न पाती?

(ख) वल्ली शहर देखने के लिए बस से उतर जाती और बस वापिस चली जाती?

3. छिप-छिपकर

"ऐसी छोटी बच्ची का अकेले सफ़र करना ठीक नहीं।"

(क) क्या तुम इस बात से सहमत हो? अपने उत्तर का कारण भी बताओ।

(ख) वल्ली ने यह यात्रा घर के बड़ों से छिपकर की थी। तुम्हारे विचार से उसने ठीक किया या गलत? क्यों?

(ग) क्या तुमने भी कभी कोई काम इसी तरह छिपकर किया है? उसके बारे में लिखो।

4. मना करना

"मैंने कह दिया न नहीं......।" उसने दृढ़ता से कहा।

वल्ली ने कंडक्टर से खाने-पीने का सामान लेने से साफ़ मना कर दिया।

(क) ऐसी और कौन-कौन सी बातें हो सकती हैं जिनके लिए तुम्हें भी बड़ों को दृढ़ता से मना कर देना चाहिए?

(ख) क्या तुमने भी कभी किसी को किसी चीज़/कार्य के लिए मना किया है? उसके बारे में बताओ।

5. घमंडी

वल्ली को या उसके किसी साथी को घमंडी शब्द का अर्थ ही मालूम नहीं था।

(क) तुम्हारे विचार से घमंडी का क्या अर्थ होता है?

(ख) तुम किसी घमंडी को जानते हो? तुम्हें वह घमंडी क्यों लगता/लगती है?

(ग) वल्ली 'घमंडी' शब्द का अर्थ जानने के लिए क्या-क्या कर सकती थी? उसके लिए कुछ उपाय सुझाओ।

6. बचत

वल्ली ने एक खास काम के लिए पैसों की बचत की। बहुत से लोग अलग-अलग कारणों से रुपए-पैसे की बचत करते हैं। बचत करने के तरीके भी अलग-अलग हैं।

(क) किसी डाकघर या बैंक जाकर पता करो कि किन-किन तरीकों से बचत की जा सकती है?

(ख) घर पर ही बचत करने के कौन-कौन से तरीके हो सकते हैं?

(ग) तुम्हारे घर के बड़े लोग बचत किन तरीकों से करते हैं? पता करो।